Vol 4 Issue 8 Feb 2015 ISSN No :2231-5063

# International Multidisciplinary Research Journal

# Golden Research Thoughts

Chief Editor
Dr.Tukaram Narayan Shinde

Publisher
Mrs.Laxmi Ashok Yakkaldevi

Associate Editor
Dr.Rajani Dalvi

Honorary
Mr.Ashok Yakkaldevi

**Welcome to GRT**

**RNI MAHMUL/2011/38595** **ISSN No.2231-5063**

Golden Research Thoughts Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial board.Readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

## *International Advisory Board*

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Kamani Perera
Regional Center For Strategic Studies, Sri Lanka

Janaki Sinnasamy
Librarian, University of Malaya

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

Titus PopPhD, Partium Christian University, Oradea,Romania

Mohammad Hailat
Dept. of Mathematical Sciences, University of South Carolina Aiken

Abdullah Sabbagh
Engineering Studies, Sydney

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Fabricio Moraes de Almeida
Federal University of Rondonia, Brazil

George - Calin SERITAN
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences Al. I. Cuza University, Iasi

Hasan Baktir
English Language and Literature Department, Kayseri

Ghayoor Abbas Chotana
Dept of Chemistry, Lahore University of Management Sciences[PK]

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Ilie Pintea,
Spiru Haret University, Romania

Xiaohua Yang
PhD, USA

.....More

## *Editorial Board*

Pratap Vyamktrao Naikwade
ASP College Devrukh,Ratnagiri,MS India

R. R. Patil
Head Geology Department Solapur University,Solapur

Rama Bhosale
Prin. and Jt. Director Higher Education, Panvel

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University,Kolhapur

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Chakane Sanjay Dnyaneshwar
Arts, Science & Commerce College, Indapur, Pune

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary,Play India Play,Meerut(U.P.)

Iresh Swami
Ex - VC. Solapur University, Solapur

N.S. Dhaygude
Ex. Prin. Dayanand College, Solapur

Narendra Kadu
Jt. Director Higher Education, Pune

K. M. Bhandarkar
Praful Patel College of Education, Gondia

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

G. P. Patankar
S. D. M. Degree College, Honavar, Karnataka

Maj. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

S.Parvathi Devi
Ph.D.-University of Allahabad

Sonal Singh,
Vikram University, Ujjain

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

R. R. Yalikar
Director Managment Institute, Solapur

Umesh Rajderkar
Head Humanities & Social Science YCMOU,Nashik

S. R. Pandya
Head Education Dept. Mumbai University, Mumbai

Alka Darshan Shrivastava
Shaskiya Snatkottar Mahavidyalaya, Dhar

Rahul Shriram Sudke
Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore

S.KANNAN
Annamalai University,TN

Satish Kumar Kalhotra
Maulana Azad National Urdu University

**Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India**
**Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.aygrt.isrj.org**

Golden Research Thoughts
ISSN 2231-5063
Impact Factor : 3.4052(UIF)
Volume-4 | Issue-8 | Feb-2015
Available online at www.aygrt.isrj.org

# समकालीन कविता में कवियों का अजनबीपन

*ललिता रानी*

सहायक प्राध्यापक हिन्दी , बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर स्नातकोत्तर ,महाविद्यालय, फिरोजाबाद (उ.प्र.)

***सांराश*** : समकालीन हिन्दी कविता अपने अस्तित्व की पहचान के लिए संघर्षरत दिखती है क्योंकि उसे इस बात का अहसास है कि यांत्रिकता के इस दौर में, हमारी जिन्दगी भागदौड़ तक ही सीमित रह गयी है, जिसके कारण उसमें अजनबीयत और निरर्थकता बोध जैसे भावों का उदय हुआ है। अस्तित्ववादी जीवन-दर्शन के प्रभाव से हिन्दी कविता में क्षणवाद, निराशावाद, लघुमानव की प्रतिष्ठा, आकांक्षा, शून्यता आदि प्रवृत्तियां आयी हैं। इस तरह से समकालीन कविता के प्रायः अधिकांश कवियों ने अस्तित्ववादी प्रभाव ग्रहण किया है तथा व्यक्ति के अनास्था, सन्त्रास, नैराश्य, अपमानबोध, अहंबोध, अजनबीपन और निरर्थकता बोध आदि की सफल अभिव्यक्ति की है। जीवन की एकागी व्यर्थता, ईश्वर का बहिष्कार, सृष्टि की अर्थशून्यता, मानवीय समाज की मूल्यहीन स्थिति ये सब तथ्य निराशावाद या पलायन का नहीं, अपितु घोर संघर्ष, गहन उत्तरदायित्व और अदम्य आशावादिता का संदेश देते हैं।

***मुख्य शब्द*** – समकालीन कविता, अजनबीपन एवं अस्तित्ववादी।

***प्रस्तावना :***

समकालीन परिवेश में कवि को अपने अजनबीपन का बोध, अधिक हुआ है। इस दुनिया की बढ़ती भीड़ में वह अपने को जब भी देखता है तो अकेला पाता है। अपनी परम्पराओं और आस्थाओं से कटा हुआ। अजनबीपन जैसे उसके अनुभव का हिस्सा बन गया है। इसी कारण हर अगली सुबह उसे अपरिचित सी लगती है जिसमें आत्मीयता का अभाव, स्वार्थी वृत्ति, परहित व परोपकार का अभाव और आत्मकेन्द्रित व्यक्तित्व की प्रधानता ही अधिक दिखाई देती है। पूर्णतः परिवेश से कटी हुई।

समकालीन कविता पर अस्तित्ववादी दर्शन का भी प्रभाव है। इसके प्रभाव को स्पष्ट करते हुए डॉ. रामविलास शर्मा ने स्पष्ट लिखा है कि –''हिन्दी के अधिकांश नयी कविता लिखने वाले का हाल 'रोकांते' जैसा है। ऊब, ऊबकाई, अकेलापन, बुरे-बुरे सपने, त्रास, आत्महत्या की चाह, सड़ांध का बोध भीड़ में अजनबीपन का अहसास, होने की समस्या से परेशानी आदि के लक्षण इसमें भी मिलते हैं।''[9] वास्तव में अस्तित्ववाद आधुनिक युग का पाश्चात्य चिंतन है जो जीवन और जगत के विषय में मनुष्य के तात्विक रूप चिंतन की प्रेरणा देता है। इस चिंतन का प्रमुख आधार सुप्रसिद्ध डेनिश दार्शनिक मारेन कीर्केगार्ड के विचार हैं जो बाद में नीत्शे, दोस्तोएवस्की, कार्ल यास्पर्श, हसल, मार्शल, हेडेगर, कामू, कफ्का तथा सार्त्र द्वारा विकसित होते रहे हैं। यह चिंतन एक युग विशेष की मांग थी, जिसमें सारा विश्व युद्ध की विभीषिका यांत्रिक जीवन की जड़ता, भौतिक सम्पन्नता की अति असमानता, जीवन के खोखलेपन का एहसास की पृष्ठभूमि में मानवीय अस्तित्व संकट की गम्भीरता के कारण प्रकट हुआ था, जिसमें उस युग के चिंतकों ने ईश्वर के किसी भी अस्तित्व को अस्वीकार कर दिया था और घोषणा कर दी थी कि ईश्वर मर चुका है और अगर वह जिन्दा है तो भी कोई फर्क नहीं पड़ता क्योंकि अगर वह जिंदा होता तो निश्चित ही इस युद्ध की विभीषिका से पीड़ित मानवता की रक्षा के लिए उपस्थिति होता। कीर्केगार्ड के ऐसे ही अस्तित्ववादी चिंतन को स्पष्ट करते हुए पाश्चात्य विचारक इबिचेक लिखते हैं कि –''अस्तित्वाद समस्त विशुद्ध अमूर्त चिंतन, विशुद्ध तार्किक या वैज्ञानिक दर्शन का अस्वीकरण है। इसके स्थान पर इस बात पर बल देता है कि दर्शन का संबंध व्यक्ति के अपने जीवन और अनुभूति के साथ, उस ऐतिहासिक स्थिति के साथ होना चाहिए, जिसमें वह अपने को पाता है और इसे अमूर्त चिंतन में रुचि नहीं रखना चाहिए, इसे तो जीवन पद्धति में रुचि रखनी चाहिए। वह एक

ऐसा दर्शन होना चाहिए जिसमें जीवित रहने की दासता हो। 'अस्तित्व' शब्द में इन सारी बातो का सार है।''[२]

***विश्लेषण*** – समकालीन कवि को अपने इस अकेलेपन में ही अपनी लघुता का भी आभास हुआ है जिसके कारण उसमें मानवी आस्था एवं अस्तित्व रक्षा की भावना भी जागृत हुई है। आज इस भावना को वह अपनी अस्तित्व संकट की रक्षा के लिए किये जा रहे संघर्ष चेतना से जोड़ लेता है क्योंकि उसे विश्वास है कि इस भीड़ में भी उसका अस्तित्व है, उसकी पहचान है –

''कितने ही लघु हों।
इससे क्या।
सार्थक है।
स्वत्व है हमारा।
कर्म।
हमारी जलती हुई आँखों में।
बंधी हुई मुट्ठी में।
मिंचे हुए ओगें।
इन यांत्रित पैरों में।
संकल्पित प्रज्ञा है।
वर्चस्वी निष्ठा है।
उत्सर्गित इच्छा है।
हम केवल चलते हैं।
अपने में।
अपने से बाहर।
धूप और अंधकार चीरे।
हम केवल चलते हैं।''३

परिवेश से पनपा हुआ यह अविश्वास का भाव नित्य ही नयी-नयी परिणतियों को जन्म देता जा रहा है, जिसमें समकालीन पीढ़ी के अंतर्द्वद्व और बिखराव का भी भाव है। ऐसी स्थिति में एक ऐसे पूर्ण आदमी को पाना मुश्किल-सा लगता है जिसमें मानवीय संवेदनाएं जीवित हों –

''यहां अपाहिज और टूटती सांसों वाले नगर में।
चीखों के अतिरिक्त और कुछ नहीं मिलेगा।
आदमी, आदमी को ढूंढ़ता रहेगा।
समूचा आदमी फिर भी नहीं पाओगे।
कहीं न कहीं वह चोट खाया हुआ।
ढहा हुआ और खोखला होगा।''[४]

अपने अस्तित्व के लिये चिंतित भयभीत समकालीन कवि, जब अपनी खुशियों को नहीं ढूंढ़ पाता है तो दूसरों के अस्तित्व को परखने और समझने का प्रयास करता हुआ, उसे ही अपने सुख या दुःख का आधार बनाना चाहता है। ठीक यही स्थिति आज समकालीन जीवन की भी है। समाचारों की सुर्खियों में उलझाकर कवि अपने को अधिक से अधिक व्यस्त रखना चाहता है ताकि स्वयं की त्रासद स्थितियों पर परदा पड़ा रहे –

''अब तो जैसी खुशी और गम।
सिर्फ खबरों पर टिके हैं।
दूसरों का समाचार, जो इस ठूंठ से पेड़ की।
नंगी भाषाओं को छूता है।
और कर देता है।
कुछ पलों के लिए गतिशील।
फिर वही।
मौत का-सा सन्नाटा।
जहां खुद अपनी सांस की आवाज।
एक दहशत-सी  भर देती है।
और डाल देती है।

अपने ही कंधों पर।
अपने ही शव का बोझ।''[५]

इस अकेलेपन के अहसास के कारण वह कभी अपने को ही मृत घोषित कर दिया है और अपनी नियति को कोसता हुआ यह सोचने के लिए विवश हो जाता है कि यंत्र कि तरह रात-दिन चलते हुए लोग आपस में टकराते हैं, मिलते हैं, लेकिन किसी में आत्मीय बोध नहीं मिलता, अपनत्व के दो शब्द सुनने को नहीं मिलते। सभी भागते जाते हैं और कवि स्वयं आने-जाने वालों की भागदौड़ को देखता हुआ अपने ही स्थान पर अकेला रह जाता है -

''इस मृत नगर में रात-दिन मैं चलता हूँ।
और अंत में वहीं पहुंच जाता हूँ।
जहां से चलना शुरू करता हूँ।
दृष्टियां असंख्य मिलती हैं।
लेकिन किसी भी पुतली में मुझे अपना अम्स नहीं दीखता।
हर संबंध की सीढ़ी से।
उतरने के बाद।
मैं अकेला टूट जाता हूँ।''[६]

इस अकेलेपन में उसके अपने सगे भी अपरिचित से लगने लगे हैं। सबके चेहरों पर दिखावटीपन है, स्वार्थ का आवरण है, जिसके साथ कवि को समझौता करना पड़ता है और उसे अपनी पहचान बतानी पड़ती है -

''मैं अपनों से अपरिचित हो गया हूँ।
दोस्त का दर्द सहस्त्रों मशीनों में पिसता हुआ।
इतना बारीक हो गया है कि उसकी तासीर।
पहचानी नहीं जाती।''[७]

ऐसी स्थिति में संवेदना विहीन होकर वह जीते जी अपने को एक लावारिस लाश की तरह, कहीं पड़ा हुआ पाता है। जिन्दगी के भटकाने में उलझा हुआ दिशाहीन -

''एक अनजान मंजिल पर पहुंचा हुआ आदमी।
किसी दूसरी की तलाश में।
न बीज बो पा रहा है।
न फसल काट पा रहा है।
बिना किसी सूचना के बदल गया है।
अजनबी शहर में लावारिश आवाज की तरह।''[८]

इस तरह से समकालीन रचनाकार आज अपने अस्तित्व के प्रति अधिक सतर्क नजर आता है। मोहभंग के बाद की स्थिति में परिवेश का शोर घुटन, अजनबीपन और निराशा के जिस वातावरण में वह जी रहा है वहां वह देख रहा है कि हमारे घर टूटे हैं, संबंधों में दरारें पड़ी हैं, परिचित चेहरे भी अपरिचित हो गये हैं। संक्रांत परिवेश हमारे भीतर संक्रमित हो रहा है और हम अपने से निष्क्रमित होकर किन्हीं दिशाहीन बीहड़ों में लापता होते जा रहे हैं। सम्पूर्ण परिवेश से ही उसे भय होने लगा है और भविष्य की चिंता सताने लगी है -

''अस्तित्व का प्रश्न-सर्प।
सहस्रों आकारों में।
लाखों-करोड़ों के सामने हैं।
कितने मुरबतों के साथ।
समय ने हमें बना दिया है - परीक्षित।
किन्तु हम सब द्वापर और कलियुग की संधि से।
इस अर्थ में बहुत आगे हैं कि हम सावधान रहना चाहते हैं।
और जीना चाहते हैं सुयोग्य भविष्य के लिए।''[९]

समकालीन सामाजिक परिप्रेक्ष्य में एक व्यक्ति पर किस प्रकार से अनास्था, कुंठा और अविश्वास हावी होते जा

रहे हैं, इसे बड़े ही सार्थक ढंग से अंधा युग में श्री भारती ने उकेरा है। काव्यारम्भ में कवि ने प्रहरी के माध्यम से इस तथ्य की अभिव्यक्ति दी है –

''आस्था का।
साहस का।
श्रम का।
अस्तित्व का हमारे।
कुछ अर्थ।
नहीं था।
कुछ भी अर्थ नहीं था।''[९०]

इस अनास्था में व्यक्ति कहीं पलायन न कर जाये, इसलिए युगीन जीवन के यथार्थ परिप्रेक्ष्य में समकालीन कवि ने मानवीय अस्तित्व में अडिग विश्वास भी व्यक्त किया है। वह मानवता के लिए चिंतित रहा है किन्तु युद्ध की किसी भी परिस्थितियों में मानव अस्तित्व की रक्षा नहीं की जा सकती। इसे 'महाप्रस्थान' में कवि ने महाभारत की पौराणिक कथा का आधार लेकर उद्घाटित किया है –

''किसी भी साम्राज्य से बड़ा है।
एक बंधु। एक अनाम मनुष्य।
मुझे मनुष्य में विराजे देवता में।
सदा विश्वास रहा है।
इस देवता के जाग्रत होने की प्रतीक्षा में।
मैं अनंत काल तक।
प्रतीक्षा कर सकता हूँ भीम।
यदि मुझे विश्वास हो जाता है कि।
सौ वर्ष के बनवास के बाद भी।
कौरव हमें अपना अधिकार दे देंगे।
तो सच मानों भीम।
मैं कभी युद्ध के लिए सहमत न होता।''[९१]

ऐसी स्थिति में कवि अपने पास-पड़ोस के प्रति भी शंकालु हो उठा है क्योंकि उसका विश्वास अपने परिवेश से उठ गया है। वह डरा हुआ है। कहाँ कब क्या हो जायेगा, इसकी कोई सुरक्षा उसके पास नहीं है –

''सारा संसार अपने कामों में।
फंसाये अपनी उंगलियां उधेड़बुन करता है।
और डरता है।
मुझसे मेरा पड़ोस।''[९२]

आज अस्मिता संकट को हर जगह महसूस किया जा रहा है जो शायद यंत्रयुग की एक भयानक त्रासदी के रूप में प्रत्यक्ष है। मानव मात्र आज सामाजिक संस्था का पुर्जा बना, युगीन समस्याओं में अपने अस्तित्व की रक्षा हेतु संघर्षरत दिखता है। इन समस्याओं के बढ़ने में कभी-कभी परम्परागत जड़ मूल्यों के कारण भी रुकावट आती है जिसके कारण व्यक्ति को अपनी निरर्थकता का भी आभास होने लगता है। 'एक पुरुष और मैं' विश्वामित्र आज के मनुष्य की संकटापन्न स्थिति को चित्रित करते हुए कहते हैं कि –

''न जाने क्या हुआ मेरे युग को।
कि कटता रहा आदमी से आदमी।
जुटती रही भीड़ जनपथों पर।
अधिकार मांगने की मुद्रा में।
शताब्दी का पानी नालियों में बह गया ....।
टूटते रहे लोग अंदर से बाहर।
और प्रार्थनाएं जड़ हो गईं।
दुखांत स्थितियों में ..... एक साथ।

एकत्रित किंकरों की भीड़।
उलटे नैवेद्यों के थाल।
अनगिनत भ्रूण हत्यायें।
चिपक गई हैं।
समय पर ..... सूर्य पर .....।''[१३]

***निष्कर्ष*** –

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि समकालीन कविता में अजनबीपन और निरर्थकता बोध मानव अस्तित्व के समक्ष गहराते संकट एवं जिजीविषा के संघर्ष दोनों ही रूपों में आया है जिसमें कवियों ने मानवीय अस्तित्व की सार्थकताओं को प्रमाणित करने का प्रयास किया है क्योंकि आज का व्यक्ति जिन परिस्थितियों में जी रहा है उसमें व्यक्ति अपनों से, अपने समाज से कटकर एकदम अकेला हो गया है। लोग अपने-अपने कामों में (स्वार्थों की पूति में) इस सीमा तक व्यस्त है कि उन्हें दूसरों की तरफ देखने या पहचानने की फुर्सत ही नहीं है। फलतः अजनबीपन का भाव विशेष रूप से जागा है। जिसमें आत्मीयता का अभाव है। फलतः मैंत्री, प्रेम, बंधुत्व जैसे परम्परित मूल्यों का हृास होता जा रहा है। सर्वत्र छल, धोखा, फरेब बढ़ता जा रहा है और व्यक्ति, को भूलकर अपनी ही स्वार्थपूर्ति व स्वहित साधना में लगा है। ऐसी स्थिति में अगर व्यक्ति में अपने अस्तित्व के प्रति निरर्थकता का भाव जागा है तो वह अनुचित नहीं है किन्तु रचनाकार युगदृष्टा, युगसर्जक, निर्माता होता है। वह मनुष्य की विद्रूपताओं, विरोधी स्थितियों एवं परिवेश की निरर्थक घुटनभरी स्थितियों के बीच भी अपने अस्तित्व के रक्षण हेतु मार्गदर्शन का कार्य किया है। समकालीन कविता की एक विशेषता के रूप में इसे देखा जा सकता है कि कवियों ने इन सारी विषम स्थितियों को मानवीय आस्थाओं से जोड़कर ही अधिकतर देखने का प्रयास किया है और सशक्त अभिव्यक्ति दी है।

***संदर्भ*** –

१.धर्मयुग, २१ दिसम्बर १९६९, पृष्ठ ४७.
२.पालरुनि लेक, अस्तित्ववाद : पक्ष और विपक्ष, पृष्ठ ११.
३.संशय की एक रात, पृष्ठ १४-१५, नरेश मेहता.
४.मद्धिम सांसों की टकराहट, पृष्ठ १५३, डॉ. सुधा गुप्ता.
५.जीने के नुस्खे, आजकल, अक्टूबर १९८२, पृष्ठ १५, मणिका मोहिनी.
६.प्रतिनिधि कविताएं, पृष्ठ ५९, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना.
७.कविताएं : कविता के बाहर, पृष्ठ २४, श्याम परमार.
८.निषेध के बाद, पृष्ठ १६९, अतुलवीर अरोड़ा.
९.किसी भी तारीख को, पृष्ठ ५७, श्रीकांत जोशी.
१०.अंधायुग, पृष्ठ १५, धर्मवीर भारती.
११.महाप्रस्थान, पृष्ठ ८६-८७, नरेश मेहता.
१२.प्रतिनिधि कविताएँ, पृष्ठ २९, श्रीकांत वर्मा.
१३.एक पुरुष और, पृष्ठ १९, डॉ. विनय.

# Publish Research Article
# International Level Multidisciplinary Research Journal
# For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Book Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

## Associated and Indexed,India

- International Scientific Journal Consortium
- OPEN J-GATE

## Associated and Indexed,USA

- EBSCO
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database
- Directory Of Research Journal Indexing

Golden Research Thoughts
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.aygrt.isrj.org